अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के बारे में प्रस्ताव

†प्रधान मंत्री तथा वदेशिक-कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : अध्यक्ष महोदय, तीन दिन पहले, १६ नवम्बर को मैंने इस सभा में अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के सम्बन्ध में एक वक्तव्य दिया था, जिसमें मिस्र और हंगरी का विशेष तौर पर उल्लेख था । इस वाद-विवाद को आरम्भ करने में, मेरा विचार उस अवस्था पर कुछ और अधिक कहने का नहीं था । मैं माननीय सदस्यों द्वारा अपने दृष्टिकोण व्यक्त किये जाने के बाद ही, वाद-विवाद के अन्त में, अपनी ओर से टिप्पणियां करना चाहता था। लेकिन, मैं अब यह महसूस कर रहा हूं कि इन विषयों के सम्बन्ध में हुई कुछ बाद की घटनाओं को सभा के सामने रख देना वांछनीय होगा ।

मैं प्रस्ताव करता हूं :

"कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और उसके सम्बन्ध में भारत सरकार की नीति पर विचार किया जाये ।"

मुझे इस सभा को यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि यह वाद-विवाद कितना महत्वपूर्ण है। यह महत्वपूर्ण इसलिये है कि आज संसार क सामने जो मसले उपस्थित हैं वे अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हैं; उनका सम्बन्ध युद्ध और शान्ति तथा स्वतन्त्रता के दमन से है और वे ऐसे मसले हैं जो हम पर प्रत्यक्ष रूप से और साथ ही अप्रत्यक्ष रूप से भी प्रभाव डालते हैं। इस सभा में हम जो कुछ भी कहते हैं उसे केवल हमारे यहां के सदस्य ही नहीं सुनते हैं, बल्कि इस देश में और विदेशों में भी उसे सुनने वालों का क्षेत्र कहीं अधिक व्यापक है । इसीलिये, मुझे लगता है कि हम पर एक काफ़ी बड़ा उत्तरदायित्व है, और मैं इसके लिये ऐसी भाषा का प्रयोग करना चाहता हूं, जो मुझे आशा है, कि किसी भी प्रकार से आगे आने वाला किन्हीं भी ऐसी शान्तिपूर्ण घटनाओं के आड़े न आयेगी, जिनके फलस्वरूप शान्तिपूर्ण रीति से निबटारे हो सकते हों। तीन दिन पहले, मैंने कहा था कि स्थिति बहुत ही गम्भीर थी, और हालांकि उसमें प्रगति के कुछ तत्व दिखाई देते थे तथापि वह बहुत ही गम्भीर थी और हम उसके बारे में चिन्तित थे । वह स्थिति अब तक वैसी ही है, हालांकि कुछ ऐसे तत्व भी हैं जिन्हें सहायक माना जा सकता है। लेकिन, बुनियादी तौर पर स्थिति बहुत ही गम्भीर है । मुझे आशा है कि आज हमारे सामने और संसार के सामने जो मामले हैं उन पर विचार करते समय माननीय सदस्य भी एक शान्तिपूर्ण वस्तुरूपता का दृष्टिकोण ही अपनायेंगे; और यदि मैं इस शब्द को उसके अर्थ का पूरा भरन रखते हुए प्रयोग करूं तो मैं कहूंगा, कि वे इस पर कुछ सावधानी से विचार करेंगे जिससे कि उनके और हमारे शब्दों के कारण स्थिति में और भी अधिक तनाव पैदा न हो जाये, और जिस उद्देश्य को हम प्राप्त करना चाहते हैं उसकी राह में कुछ कठिनाइयां पैदा न हो जायें ।

हम नित्य ही समाचारपत्र पढ़ते हैं, और उनमें नित्य ही सभी प्रकार के समाचार और आरोप भरे रहत हैं । स्वाभाविक ही है कि हम पर उनकी प्रतिक्रिया होती है । लेकिन इस पर भी, हमारे लिये यह कोई सुगम कार्य नहीं है कि हम यह पता लगा सकें कि कौन-सी बात सत्य है और किसमें कितना नमक मिर्च लगाया गया है । हम आंग्ल-फ्रांसीसी सेना की टुकड़ियों के इजराईल से कहीं किसी स्थान पर उतरने का भी समाचार सुनें । मेरा विश्वास है कि इसका खण्डन किया जा चुका है । हमने सोवियत विमानों के सीरिया में जाने के समाचार भी देखे । इसका भी खण्डन किया जा चुका है और कहा जाता है कि इस संकट से बहुत पहले ही सीरिया सरकार द्वारा ख़रीदे गये कुछ विमानों को छोड़कर, वहां और कोई भी विमान नहीं भेजे गये हैं । हम इसी प्रकार कई अन्य समाचार और भी सुनते रहे हैं । जिनका या तो प्रत्यक्ष रूप से खण्डन कर दिया गया है, या उनकी अभिपुष्टि नहीं की गई है । ऐसे मामलों में हमारे या संयुक्त राष्ट्र संगठन जैसे उत्तरदायित्वपूर्ण निकाय के लिये अपरिपुष्ट समाचारों के आधार पर कोई अग्रेतर

†मूल अंग्रजी में ।

कार्यवाही करना बहुत ही कठिन है और इसके फलस्वरूप यही नहीं है कि कुछ उलझनें पैदा हो सकती हैं, बल्कि यदि वे घटनायें, जिन के आधार पर वे समाचार दिये गये थे, सच न हों, तो उन के कारण एक सही नेतृत्व देने में भी कठिनाई पैदा हो जाती हैं।

हाल ही में, हमने हंगरी से कुछ व्यक्तियों के, विशेषकर युवकों के, निर्वासित किये जाने के समाचार देखे थे। कहा गया था कि सोवियत अधिकारियों ने यह निर्वासन किये थे। अब हंगरी की सरकार ने संयुक्त राष्ट्र संगठन में इससे इन्कार कर दिया है। सोवियत सरकार ने भी इससे इन्कार किया है। मेरा ख्याल है कि आज भी संयुक्त राष्ट्र की महासभा में इस विषय से सम्बन्धित एक ऐसा संकल्प प्रस्तुत किया गया है, जो समाचारपत्रों के उन समाचारों पर आधारित है जिनका कि उनसे सम्बन्धित, और उनकी सबसे अधिक जानकारी रखने वाली दोनों सरकारों ने स्पष्टतः खण्डन किया है। अब इस विषय में और अधिक सूचना या अधिक जांच-पड़ताल के बिना किसी के लिये किसी निष्कर्ष पर पहुंचना असाधारण रूप से कठिन हो जाता है। वास्तव में मैं समझता हूं कि महासभा में हंगरी की सरकार की ओर से यह कहा गया था कि वह न केवल इसका निश्चित रूप से प्रतिवाद करती है, बल्कि उसने स्वयं ही श्रमिकों, युवकों आदि के कुछ प्रतिनिधियों को यह अनुमति दे दी है कि वे स्वयं हंगरी से बाहर जाने वाले रास्तों पर जाकर देखें कि वहां कुछ हो तो नहीं रहा है, या किसी को देश से बाहर तो नहीं भेजा जा रहा है। इस स्थिति में, यह कल्पना की जा सकती है—यह केवल कल्पना ही है—कि इन युवकों या श्रमिकों को स्वयं अपनी आंखों से वहां की हालत देखने के लिये भेजा जा रहा था, और हो सकता है कि उनको वहां जाते देखकर यह अनुमान लगाया गया हो कि उनको निर्वासित किया जा रहा था। मुझे ठीक-ठीक स्थिति मालूम नहीं है, मैं तो केवल यह बता रहा हूं कि सही-सही हालत जानने में कितनी कठिनाई होती है।

अब, मिस्र को लीजिये। सभा को मालूम ही है कि गत कुछ माहों में हुई घटनाओं से हमारा कितना घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। मिस्र के साथ भी हमारे सम्बन्ध बड़े घनिष्ट हैं, और हम वहां होने वाली घटनाओं से लगातार सम्पर्क बनाये रख रहे हैं। स्वेज़ नहर के राष्ट्रीयकरण के समय से ही हम बराबर उसके साथ घनिष्ट सम्पर्क बनाये रहे हैं, और इसलिये वहां जो कुछ भी हुआ है वह हमारे लिये कोई ऐसी बिल्कुल ही नई बात नहीं रही है जिनका कि हमें पहले से पूर्व ज्ञान न रहा हो। अर्थात्, हम एक ऐसी स्थिति में थे, हम एक अधिक अच्छी स्थिति में थे, जिससे कि वहां की स्थिति को ठीक-ठीक रूप में समझ सकते। उस समय वहां की स्थिति में कोई पेचीदगी नहीं थी, कोई भी अस्पष्टता नहीं थी। लेकिन बाद में, मिस्र में कुछ ऐसी घटनायें हुई हैं जो कि कुछ उलझन में डालने वाली हैं, उदाहरण के लिये, पोर्ट सईद आदि के मामलों को देखिये। लेकिन फिर भी मोटे-मोटे तथ्य तो हमारे लिये स्पष्ट थे और हमने इसीलिये उसके सम्बन्ध में एक स्पष्ट और निश्चित राय प्रकट करने का साहस भी किया था।

हंगरी के सम्बन्ध में एक कठिनाई यह थी कि मोटे-मोटे तथ्य भी हमारे सामने स्पष्ट नहीं थे, और यह भी बात थी कि हंगरी की घटनायें एक ऐसे अवसर पर घटीं जबकि अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति अचानक ही बहुत अधिक बिगड़ गई थी और हमारे लिये वहां की वर्त्तमान स्थिति और घटनाओं की सत्यता के सम्बन्ध में अधिक विश्वस्त और स्पष्ट जानकारी प्राप्त करना आवश्यक था। हमने, इसीलिये, वहां के तथ्यों के सम्बन्ध में अपनी राय व्यक्त करने में थोड़ी सावधानी से काम लिया था। वहां की दशा का मार्ग-दर्शन करने वाले सामान्य सिद्धान्तों के सम्बन्ध में अपनी राय व्यक्त करने में हमने कोई भी हिचक नहीं दिखाई जैसा कि सभा जानती है, कि हमने आरम्भ से ही यह बिल्कुल स्पष्ट रूप से कह दिया था कि हंगरी, या मिस्र, या किसी भी अन्य स्थान में जनता की स्वतन्त्रता के तत्त्वों का हिंसात्मक रूप से दमन स्वतन्त्रता पर आघात करना था। मैंने स्वयं ही यह कहा था और मैंने निश्चित रूप से यह स्पष्ट कर दिया था कि सबसे पहले तो मिस्र और हंगरी दोनों ही देशों से विदेशी सेनाओं को हटा दिया जाना चाहिये—हालांकि ये

[श्री जवाहरलाल नेहरू]
दोनों मामले एक दूसरे के अनुरूप नहीं हैं, दोनों के तथ्य भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं, लेकिन विदेशी सेनाओं के हटाये जाने का तथ्य तो दोनों ही में था । मैंने दूसरी बात यह कही थी कि हंगरी की जनता को स्वयं ही अपने भविष्य का निश्यचत करने का अवसर दिया जाना चाहिये ।

मुझे विश्वास है कि अब भी हंगरी में और विदेशी सेनाओं द्वारा अधिकृत मिस्र के पोर्ट सईद जैसे क्षेत्रों और इज़राईल की सेना द्वारा अधिकृत अन्य क्षेत्रों में बाहर के लोगों को जाने की सुविधायें नहीं दी जा रही हैं । पिछली बार मैंने इस सभा में कहा था, कि जो समाचार हमें प्राप्त हुए थे, उनके अनुसार पोर्ट सईद में स्थिति बहुत खराब थी और वहां बहुत लोग हताहत हुए थे । मैं ने बहुत सावधानी से वक्तव्य दिया था । जो समाचार हमें मिले थे उनमें स्थिति उससे कहीं बुरी बताई गई थी जितनी कि मैंने इस सभा में बताई थी, परन्तु क्योंकि मैं अग्रेतर प्रमाण के बिना उन समाचारों के आधार पर कार्य-वाही नहीं करना चाहता था, इसलिये मैंने उसका उल्लेख करते हुए अपनी भाषा को नम्र बना दिया था । तथ्य यह है कि जहां तक मुझे ज्ञात है, अभी तक किसी को पोर्ट सईद में जाने की अनुमति नहीं है । जो समाचार पहले हमारे पास आये थे उनमें से कुछ शरणार्थियों द्वारा दिये गये थे और हम प्राय: उत्तेजित शरणार्थियों के वक्तव्यों को बहुत महत्व नहीं देते हैं—इसलिये नहीं कि वे जानबूझ कर गलत होते हैं, वरन् इसलिये कि उनमें इतनी भावुकता और उद्वेग होता है कि उनसे हालात का ठीक-ठीक पता नहीं लगता है । पोर्ट सईद की घटनाओं के सम्बन्ध में जो समाचार हमें मिले थे वे कुछ ऐसे विदेशी पत्रकारों द्वारा दिये गये थे जो कि अपनी जान हथेली पर रख कर पोर्ट सईद गये थे और जिनके वक्तव्य यूरोप के विदेशी समाचारपत्रों में प्रकाशित हुए थे ? परन्तु इस पर भी हमें उन्हें स्वीकार करते हुए झिझक हुई क्योंकि वे इतने खराब थे कि हमने उनकी पुष्टि आवश्यक समझी । वस्तुत:, हंगरी की ही तरह मिस्र के मामले में भी हम यह सुझाव देते रहे है, कि प्रत्येक दृष्टिकोण से और अधिकार करने वाली सेनाओं के दृष्टिकोण से भी, यह वांछनीय है कि निष्पक्ष पर्यवेक्षक, जो कि यदि संयुक्त राष्ट्र संघ के हो तो अधिक अच्छा हो, वहां भेजे जायें और ये वहां के हालात को देख कर प्रतिवेदन दे । मेरा यह निश्चिंत विश्वास है कि दोनों स्थानों की सरकारें और सम्बन्धित प्राधिकारी ऐसा किये जाने की अनुमति देंगे, क्योंकि अन्यथा सभी प्रकार के गलत समाचार फैलते हैं और उन पर विश्वास भी कर लिया जाता है ।

हमें अपने विदेशी दूतावासों और विदेशों में स्थित शिष्टमण्डलों से पूरे समाचार प्राप्त होते रहे हैं । प्राय: प्रतिदिन हमें न्यूयार्क, वाशिंगटन, लंदन, मास्को, बेल्ग्रेड, काहिरा, बेरूत, दमिश्क, बर्न और अन्य कुछ स्थानों तथा वियेना और बुडापेस्ट से भी समाचार प्राप्त होते रहते हैं, क्योंकि इस सारी काला-वधि में हमारे नवयुवक पदाधिकारियों में से एक लगातार बुडापेस्ट में रहा । यह सत्य है कि वह हमारे साथ सुगमता से पत्र व्यवहार नहीं कर सका था और उसके तार हमें अब प्राय: छ: दिन की देर से प्राप्त होते हैं, क्योंकि सम्भवत: वे पहले सड़क के रास्ते से वियेना भेजे जाते हैं और फिर वहां से प्रेरित किये जाते हैं । धीरे-धीरे हालात का स्वरूप स्पष्ट हो गया है । यह दैनिक जानकारी हमें न केवल अपने शिष्टमण्डलों से मिलती है वरन् अन्य सरकारें भी शिष्टाचार के नाते देती हैं—विशेषत: मैं अमरीका, कनाडा, रूस, यूगोस्लाविया और अन्य कुछ सरकारों से प्राप्त हुए समाचारों के लिये उनका आभारी हूं । इन सब समाचारों से इतनी अधिक जानकारी प्राप्त हुई है कि वह प्राय: परस्पर विरोधी है । मैं तो यह कहूंगा कि इनसे जो चित्र प्रस्तुत होता है वह बहुत ही अस्पष्ट है, परन्तु, मैं समझता हूं कि यह सत्य है कि इन से इन हालात का अच्छा ज्ञान हो सकता है । अब मैं विदेश स्थित अपने प्रतिनिधियों का उल्लेख किये बिना यह कह दूं कि मैं अपने काहिरा स्थित राजदूत द्वारा किये गये कार्य की, जो बहुत अच्छा रहा है, प्रशंसा करता

जहां तक मिस्र को स्थिति का सम्बन्ध है सभा को ज्ञात है कि हमारी सेना की पहली टुकड़ी वहां पहुंच चुकी है । और टुकड़ियां भी जायेंगी । मैं यह पूर्णत: स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि हमने किन शर्तों

पर अपनी सेनाओं को संयुक्त राष्ट्र संघ की सेनाओं में शामिल किये जाने के लिये भेजा है । सर्वप्रथम, हमने यह स्पष्ट कर दिया था कि हम केवल तभी अपनी सेनायें भेज सकते थे जबकि मिस्र की सरकार सहमत होती, दूसरे उन्हें किसी भी दृष्टि से अंग्रेजी और फ्रांसीसी सेनाओं के कार्य को जारी रखने वाली सेना नहीं समझा जायेगा क्योंकि वह एक सर्वथा भिन्न कार्य है, तीसरे अंग्रेजी और फ्रांसीसी सेनाओं को वापस बुला लिया जाना चाहिये, चौथे, संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं को इज़राईल और मिस्र के बीच की प्राचीन युद्धविराम सीमा की रक्षा करने का कार्य करना चाहिये और अन्त में यह कि यह कार्य पूर्ण रूप से अस्थायी होना चाहिये । हम इस बात के लिये सहमत नहीं हो सकते कि हमारी सेना या कोई सेना वहां अनिश्चित काल के लिये रहे । इन शर्तों पर , जो कि स्वीकार कर ली गई थीं, यह सेनायें वहां भेजी गई थीं । मैं इसे फिर दोहराता हूं क्योंकि इस संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय सेना के सम्बन्ध में कभी-कभी ऐसे वक्तव्य दिये जाते हैं जो कि दुर्भाग्य से संयुक्त राष्ट्र के निर्णय, अथवा, मुझे विश्वास है, मिस्र की सरकार और संयुक्त राष्ट्र के महा सचिव के बीच हुए करारों से संगत नहीं हैं ।

तो संयुक्त राष्ट्र महासभा के संकल्प के सम्बन्ध में इस समय मिस्र में जो प्रश्न पैदा होता है वह अंग्रेजी, फ्रांसीसी और इज़राईली सेनाओं के मिस्र के राज्य क्षेत्र से वापस बुलाया जाने से सम्बन्धित है । यह एक भयानक समस्या है क्योंकि यदि कुछ देर करने का कोई प्रयत्न किया गया, और निश्चय ही यदि सेनाओं को वापस बुलाने का प्रयत्न न किया गया, तो संभावना है कि युद्ध पुनः आरम्भ हो जाये, और, मैं समझता हूं, कि यह युद्ध पहले की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर होगा ।

यह कहा गया है—और मुझे विश्वास है कि विश्वस्त आधार पर कहा गया है—कुछ दिन पूर्व सम्भवतः उन सेनाओं में कुछ और वृद्धि की गई है । किसी को भी पता नहीं लगता है कि कब सेनाओं में परिवर्तन किया जाता है, कुछ वापस बुलाया जाता है और कुछ को भेजा जाता है, इसका कुछ पता नहीं चलता है । परन्तु तो भी यह अत्यधिक महत्वपूर्ण बात है कि अंग्रेजी फ्रांसीसी और इज़राईली सेनायें अपने अधिकृत क्षेत्रों से वापस बुला ली जायें क्योंकि इसके बिना कोई भी काम नहीं किया जा सकता है, और जब तक वे वहां हैं, युद्ध के पुनः आरम्भ हो जाने का भय निरन्तर बना रहेगा ।

मैं पोर्ट सईद के सम्बन्ध में पहले ही बता चुका हूं कि इस सम्बन्ध में तुरन्त ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है, और यह कार्य ठीक प्रकार से तभी हो सकता है जबकि पर्यवेक्षकों को वहां जाने और वहां जाकर प्रतिवेदन देने की अनुज्ञा दी जाये । मैं सभा को यह बता दूं कि हम—सम्भवतः कल—तीन डकोटा के आकार के एक बड़ा वायुयान में चिकित्सा सम्बन्धी वस्तुओं और सहायता की वस्तुओं को मिस्र और हंगरी भेज रहे हैं ।

जैसा मैंने, बताया, हंगरी की स्थिति और विशेषतः वहां की विस्तृत परिस्थितियों के बारे में हमें कुछ समय तक कोई स्पष्ट जानकारी नहीं थी । मुझे यह भी निश्चय नहीं है कि हमें अब भी पूर्ण जानकारी है या नहीं, परन्तु मैं समझता हूं कि मोटी-मोटी बातें अब काफी स्पष्ट हैं । इसमें कोई संदेह नहीं कि वहां प्रदर्शन आदि के पश्चात् जो राष्ट्रीय अपद्रोह हुआ वह वहां रूसी सेनाओं के साथ हुई मुठभेड़ के पश्चात् हुआ । रूसी सेनायें बुडापेस्ट से वापस बुला ली गई थीं और ३० अक्तूबर को इन देशों के सम्बन्ध में रूसी नीति के बारे में वक्तव्य दिया गया था, जिसमें बताया गया था कि वारसा शक्तियों के साथ परामर्श आदि करने के पश्चात् ही उनकी सेनाओं को वापस बुलाया जायेगा इत्यादि ।

मैं समझता हूं कि यह सच है कि सेनायें वापस बुला ली गई थीं । परन्तु , इसके बाद तुरन्त ही, बुडापेस्ट में और घटनायें हुई—और यह मामला ठीक तरह से स्पष्ट नहीं है—मैं समझता हूं कि ये घटनायें बुडापेस्ट में नहीं वरन् हंगरी में हुईं और तीन-चार दिन में ही रूसी सेनायें और अधिक मशीनी ताक़त के साथ वापस आ गई । बुडापेस्ट में बड़े पैमाने पर उपद्रव हुए जोकि अन्त में रूसी सशस्त्र सेनाओं द्वारा

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

दबा दिये गये। कुछ लोग कहते हैं कि जब कि रूसी सेनायें २९ अथवा ३० को बुडापेस्ट से वापस जा रही थीं तो वस्तुतः रूसी सेना ने सीमांत को पार कर लिया था और सेनाओं की यह वापसी वास्तविक वापसी नहीं थी। दूसरे लोग समझते हैं कि उन दो-तीन दिनों में कुछ ऐसी घटनायें हुई जिनसे कि रूसी सरकार को अपनी नीति बदलनी पड़ी, क्योंकि हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि जब भी कोई सरकार और विशेषतः रूसी सरकार अथवा ब्रिटिश सरकार या कोई बड़ी शक्ति ऐसा करती है, तो सम्भवतः इन सभी पृथक-पृथक प्रश्नों पर अन्य अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और बड़े युद्ध की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाता है यह बात सदैव उनके ध्यान में रहती है। तो भी यह तथ्य है कि रूसी सेनायें वापस आईं, और बड़े पैमाने पर उपद्रव हुआ और बहुत से हंगेरियन मारे गये क्योंकि वे बहुत वीरता से लड़े। और यह भी संभव है कि हंगरी की सेना भी हंगरी की जनता के साथ हो और आरम्भ में रूसियों को भी काफी हानि उठानी पड़ी, यद्यपि स्वभावतः कम परिमात्रा में। इस समय इसका बहुत महत्व नहीं है कि हम वहां हुई घटनाओं का ब्यौरा जानें। मुख्य तथ्य यही है कि हंगरी की अधिकांश जनता राजनैतिक, आर्थिक अथवा अन्य प्रकार के परिवर्तन चाहती थी, और वस्तुतः वह उसे प्राप्त करने के लिये प्रदर्शन आदि के पश्चात् विद्रोह कर उठी परन्तु अन्त में उन्हें दबा दिया गया।

मैं समझता हूं कि यह सच है कि हंगरी में कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्हें फासिस्ट कहा जा सकता है, इस शब्द का कभी-कभी दुरुपयोग भी किया जाता है। मैं समझता हूं, कि यह भी सच है कि बाहर से भी लोग आये क्योंकि सीमांत सेनायें अपना कार्य नही कर रही थीं, और मैं समझता हूं कि यह भी सच है, कि कुछ सीमा तक शस्त्रास्त्र भी बाहर से आये। यह सब कुछ सत्य है। परन्तु यद्यपि यह सत्य है, यह मुख्य तथ्य नहीं है। मुख्य तथ्य यह है कि हंगरी की जनता, अधिकांश जनता विदेशी नियंत्रण और हस्तक्षेप से स्वतन्त्र होना चाहती थी, उसने रूसी सेनाओं के आने पर आपत्ति की, वह चाहती थी कि वे सेनायें वापस चली जायें और वह अपनी सरकार में कुछ परिवर्तन करनी चाहती थी। यह मूल तथ्य है जिससे कोई इन्कार नहीं कर सकता है।

हंगरी की जनता ने जो युद्ध छेड़ा---कुछ दिन हुए यह समाप्त हो गया है, मेरे विचार में अब वे नहीं लड़ रहे---इससे भी अधिक साभिप्राय और महत्वपूर्ण बात हंगरी की घटनाओं में यह थी कि जब लड़ाई समाप्त हुई तो वहां अहिंसात्मक प्रतिरोध का एक असाधारण प्रदर्शन हुआ। बुडापेस्ट के लोगों ने काम पर जाने से इन्कार कर दिया, और ऐसे समय में, जब कि सशस्त्र लड़ाई के समय काम बन्द करने के कारण नगर को बहुत हानि पहुंच रही रही थी, अन्य सामान्य कार्यों में भाग लेने से इन्कार कर दिया। सेनाओं का लड़ाई के द्वारा विरोध करने के अतिरिक्त, जनता का यह अहिंसापूर्ण विरोध, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, उस देश की जनता की इच्छाओं को सशस्त्र विद्रोह की अपेक्षा अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है, क्योंकि सशस्त्र विद्रोह तो कुछ दलों द्वारा जहां-तहां कराया जा सकता है।

मुझे नहीं मालूम कि यहां उपस्थित कितने माननीय सदस्यों को हंगरी का पिछला इतिहास ज्ञात है। यह इतिहास एक दुःखद इतिहास है जिसमें स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये कई बार प्रयास किये गये और उन्हें कई बार दबा दिया गया। आस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्य में ऐसे प्रयत्न किये गये। हमें भली प्रकार याद है, कि लगभग ४० वर्ष पूर्व जब महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन का स्वरूप पहली बार इस देश के समक्ष रखा था तो हमें क्या बताया गया था; और हमने वस्तुतः अन्य देशों में असहयोग आन्दोलन के विभिन्न तरीकों और इसी प्रकार की अन्य बातों के विषय में पढ़ा था।

उन देशों में विशेषतः हंगरी में, लगभग १९वीं शताब्दी के मध्य में, अहिंसात्मक असहयोग का एक आन्दोलन, मेरे विचार में ओडायर के नेतृत्व में चला, जिसमें पूर्णतः तो नहीं, परन्तु कुछ सफलता मिली। परन्तु बाद में प्रथम विश्व युद्ध के समाप्त होने के पांच सप्ताह पूर्व, अक्तूबर क्रांति के तुरन्त बाद, मुझे

ठीक तिथि तो याद नहीं, परन्तु लगभग १८१८ में हंगरी में एक उथल-पुथल हुई थी; आस्ट्रो-हंगरी टूट रहा था; जर्मन सेना वहां थी और वह वहां से निकल भी रही थी, और उस समय वहां उसी प्रकार की उथल-पुथल हुई वैसी ही क्रांति हुई, जैसी कि उन्हीं दिनों रूस में हुई थी। उसका नेता बेलाकून था। वह लेनिन का सहयोगी था और उसने हंगरी के गणतन्त्र को स्थापित किया था। क्रान्ति के पश्चात् यह वह समय था जबकि अन्य देश सोवियत रूस के मामलों में हस्तक्षेप कर रहे थे। रूमानिया की सेना ने उस समय हंगरी में घुस कर नये हंगरी के इस गणतन्त्र को दबा लिया था। जहां तक मुझे याद है बहुत ही कठोर दमन किया गया था। वास्तव में यह गणतन्त्र का दमन ही नहीं था, प्रत्युत रूमानिया की सेना द्वारा व्यापक आधार पर हंगरी में लूटमार की गई थी। इसका परिणाम यह हुआ कि गणतन्त्र समाप्त हो गया और एडमिरल होर्थी के नेतृत्व में एक प्रकार का सामन्तवादी शासन वहां स्थापित हुआ। माननीय सदस्यों को शायद याद हो, कि १९वीं और २०वीं शताब्दी में हंगरी यूरोप का सब से प्रबल सामान्तवादी देश रहा था, जिसमें बड़े-बड़े भूमिपति थे और दकियानूसी कुलीन तन्त्र का बोलबाला था। विभिन्न दलों में संघर्ष भी हुआ था। खैर, वहां एडमिरल होर्थी का शासन था। सन् १९१८ में जब मैं बुडापैस्ट में था तो मैंने देखा था कि वहां की स्थिति कोई सन्तोषजनक नहीं थी; और इसके पश्चात् महायुद्ध आ गया। मैंने इस सब का इसलिये उल्लेख किया ताकि सदन का ध्यान हंगरी के दुखद इतिहास की ओर आकृष्ट कर सकूं। हंगरी के कई ऐसे नाम हैं जो जनता के स्वतन्त्रता के युद्ध के कारण प्रसिद्ध हैं। कुछ भी हो, इसमें सन्देह नहीं कि हंगरी का वर्त्तमान आन्दोलन एक लोक प्रिय तथा जनता का आन्दोलन था; इसके पीछे काफी जनता थी, इसमें श्रमिक भी थे और युवक भी थे। यह भी हो सकता है, कि कुछ लोग इसके विरुद्ध भी हों; क्योंकि मैं सब के सम्बन्ध में तो कुछ नहीं कह सकता हूं। जैसा कि मैंने कहा, कि इस अहिंसात्मक प्रतिरोध का महत्व इसलिये भी बढ़ जाता है कि यह सब कुछ भारी सशस्त्र सेना द्वारा विरोध किये जाने के बावजूद हुआ।

जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हम कुछ दिन हुए चार प्रधाव मंत्रियों द्वारा दिये गये संयुक्त वक्तव्य में पूर्णतः सहमत हैं। इसके अतिरिक्त, यदि मैं कहूं, तो बात यह है कि योग्य प्रेक्षकों को वहां जाना चाहियें। चाहे पोर्ट सईद हो, अथवा मिस्र का कोई दूसरे भाग हों, बुडापेस्ट हो अथवा हंगरी का कोई दूसरा हिस्सा हो, जहां भी विदेशी सेना का कब्जा है, वहां इन प्रेक्षकों को जाना चाहिये, उनके वहां जाने से न केवल वास्तविक स्थिति का पता लग सकेगा, अपितु एक रास्ता-सा बन जायेगा और संसार यह जान सकेगा कि वहां क्या हुआ था और क्या हो रहा है।

अब, इनके पीछे कई प्रकार की अन्य शक्तियां काम कर रही हैं और कुछ और भय भी है। स्वाभाविकतः हम चाहते हैं कि विदेशी सेनायें मिस्र और हंगरी से वापस बुला ली जायें। वस्तुतः, यह प्रश्न मिस्र के सम्बन्ध में उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि वहां एक सरकार कार्य कर रही है, परन्तु हंगरी के सम्बन्ध में यह प्रश्न उत्पन्न होता है। सदन को पता है कि गत एक-दो वर्ष में पूर्वी यूरोप में कुछ ऐसी उथल-पुथल हुई है, स्वयं सोवियत संघ मे भी उथल-पुथल हुई है जिससे कि काफी सीमा तक वहां की शासन प्रणाली में उदारीकरण हुआ है। यह उथल-पुथल पोलैंड में तो और स्थानों से भी अधिक हुई है, इस प्रकार का विक्षोप प्रायः सभी देशों में फैला हुआ है, और जिस बात का न केवल हमें परन्तु दूसरे देशों को भी ध्यान रखना है वह यह था कि जब कोई ऐसी बात की जाये जो कि आन्तरिक परिवर्तन की इस प्रक्रिया के आड़े आते हों, जिसका प्रभाव हो, अपेक्षित परिणाम से उलटा पड़ता हो, तो उसका सम्बन्ध युद्ध और शांति की विशाल समस्या से आ जुड़ता है। इन प्रश्नों के पीछे हम क्या देखते हैं? अन्तिम विश्लेषण में इस का कारण भय है—पश्चिमी शक्तियों का भय है, सोवियत संघ की सैनिक शक्ति का भय है, सोवियत रूस का भय है, और इससे अधिक पुनः सशस्त्र हुये जर्मनी के सम्भावित सैन्य बल का भय है। समस्त पूर्वी यूरोप में चाहे वह पोलैण्ड हो अथवा हंगरी हो, चैकोस्लोवाकिया हो अथवा वे अन्य देश हों जिन्हें लगातार जर्मनी के आक्रमणों का सामना करना पड़ता रहा है, उन सभी को सशस्त्र जर्मनी की ओर से आक्रमण

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

का भय है; सोवियत संघ का भय भी हो सकता है, चाहे इससे पहले भय का निराकरण हो जाता हो। परन्तु तो भी यह भय तो है ही और पश्चिमी देशों के सोवियत संघ के सैन्य बल के प्रति इसी भय के कारण 'नैटो' का जन्म हुआ। और इसके दूसरी सन्धियां और 'सीटो' और बगदाद संधि जैसे सैनिक गठबन्धन हुए। इसके मुकाबले में वारसा संधि हुई, इनमें से प्रत्येक आक्रमण होने की अवस्था में शान्ति पूर्ण प्रतिरक्षा के लिये बनाये गये संगठन हैं, वास्तव में प्रत्येक का उद्देश्य अपने प्रतिपक्षी को भयभीत करना और उसके खतरे के प्रति अधिक जागरूक करना है, और, इसीलिये, शस्त्रीकरण की इस दौड़ को प्रोत्साहन मिला है।

इस पृष्ठ भूमि के कारण, जब मिस्र में, तीन सप्ताह हुए विषम स्थिति पैदा हुई, जब कि आंग्ल-फ्रांसीसी सेना ने काहिरा, इत्यादि पर बम वर्षा की, तो एकाएकी इसके फैलने की सम्भावना बढ़ गई। हंगरी में भी विषम स्थिति उत्पन्न हुई और दोनों के मिल जाने से निश्चय ही इस खतरे में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। माननीय सदस्य देखेंमे—मैं पूर्ण तथ्य सम्मान तथा आदर से कह रहा हूं—कि मेरे इस भाषण का उद्देश्य किसी देश की निन्दा करना नहीं है—इसलिये सही कि उनकी गतिविधियां तथा कृत्य ऐसे नहीं हैं जिन की कि निन्दा न की जा सके, परन्तु तथ्य यह है कि इन दो कारणों से, मिस्र और हंगरी की स्थिति के कारण,प्रत्येक पक्ष की ओर से यह प्रयत्न किया गया कि अपने दुर्व्यवहार को छिपाने के लिये अन्य स्थान पर कुछ भी हुआ है उसे ही महत्व दिया जाये।

मिस्र में आंग्ल-फ्रांसीसी कार्यवाही हुई, और संयुक्त राष्ट्र संघ में इसके विरुद्ध विश्व व्यापी आवाज उठी। फिर हंगरी की बात आई। काफी बुरी बात थी। परन्तु तुरन्त ही इससे जो कुछ मिस्र में हो रहा था उसे छिपाने का प्रयत्न किया गया। हंगरी का संघर्ष एक आधारभूत बात थी जिससे कि मिस्र में किये गये अत्याचार को छुपाया जा सके अब दोनों ओर से यही हो रहा है।

मैं एक क्षण के लिये भी यह कहना नहीं चाहता कि हम दूसरे देशों की अपेक्षा अधिक उच्च, पवित्र और महान हैं। परन्तु हम कम से कम ऐसी स्थिति में अवश्य हैं जिससे हम किसी एक पक्ष अथवा प्रतिपक्ष की बात से उत्तेजित नहीं हो सकते हैं, इसीलिये शायद हम अधिक निष्पक्षता से इन घटनाओं पर विचार कर सकते हैं।

हाल ही में हुई घटनाओं का जहां तक सम्बन्ध है, सदन को ज्ञात होगा कि अभी कल ही प्रधान मंत्री बुलगानिन ने एक अपील जारी की थी। उनसे मुझे एक पत्र भी प्राप्त हुआ था जिसमें विश्व की स्थिति और विशेषत: निस्शस्त्रीकरण के प्रश्न पर विचार करने के लिये एक सम्मेलन बुलाये जाने के सम्बन्ध में सुझाव दिये गये थे। विभिन्न सुझावों का परीक्षण कर लिया गया है, और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि निस्शस्त्रीकरण एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात है और विशेष रूप से वर्तमान परिस्थिति में। परन्तु इस प्रश्न का निर्णय, कि कोई सम्मेलन हो अथवा न हो, और यदि हो भी तो उसमें निस्शस्त्रीकरण के प्रश्न पर विचार किया जाये अथवा नहीं, बड़ी शक्तियों द्वारा किया जायेगा। हमारे पास निस्शस्त्रीकरण के लिये कोई विशाल सेना नहीं है। इस मामले में, वस्तुत: तीन या चार शक्तियां हैं जिनकी कि वास्तव में चलती है। उन्हीं को इसका निर्णय करना है। इस कार्य में हम यदि कुछ सहायता कर सकें तो स्वाभाविक तौर पर हमारी सेवायें इसके लिये प्रस्तुत रहेंगी।

अब मैं सदन के समक्ष कुछ और विचार भी रखना चाहता हूं, अर्थात् घटनाओं की तह में जाना चाहता हूं, जो महान् परिवर्तन हो रहे हैं उनकी तह में जाना चाहता हूं। सब से पहले हम सभी ने निर्बल देशों के विरुद्ध हिंसा तथा सशस्त्र शक्ति के इस नृशंस प्रयोग को देखा। स्पष्टत: यह हिंसा और सैन्य बल की विजय प्रतीत होती है, और इससे सैनिक दृष्टि से कमजोर प्रत्येक देश खतरे में पड़ गया है, उसकी स्वतन्त्रता अरक्षित हो गई है, और विशेषत: एशिया और अफ्रीका के प्रत्येक देश को इस खतरे का अनुभव

करना चाहिये । यह सत्य है । परन्तु इसका एक और पहलू भी है और वह यह कि हिंसा और सैन्य बल का यह प्रदर्शन असफल रहा है अथवा असफल होने जा रहा है । इससे विस्तृत हानि हुई है महान दुःख और महान विद्वेष उत्पन्न हुए हैं, परन्तु अन्तिम विश्लेषण में यह असफल रहा है । अथवा मेरे विचार से यह किसी भी उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रहा है । मिस्र पर हुए आक्रमण को ही लीजिये । मेरे विचार से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इंगलैण्ड और फ्रांस को इस से कोई लाभ नहीं हुआ है और न ही उन्हें कुछ लाभ होने ही को है, अपितु उनकी महान हानि होगी । इस बात के अतिरिक्त कि मिस्र की असीम हानि हुई है, इंगलैण्ड और फ्रांस को भी हानि उठानी पड़ी है, यद्यपि जनहानि इतनी नहीं उठानी पड़ी है, परन्तु तो भी विस्तृत क्षेत्र में लड़ाई होने और पैराशूट से सैनिकों के उतरने के कारण आंग्ल-फ्रांसीसी पक्ष में हुई जनहानि अत्यधिक है । इसके अतिरिक्त भारी आर्थिक हानि भी हुई है जो कि अभी आगे भी होती रहेगी और इससे इन देशों का आर्थिक ढांचा डांवाडोल हो जायेगा । इससे फ्रांस और इंग्लैण्ड जैसे देशों की समस्त व्यापार प्रक्रिया और अन्य गतिविधियों पर प्रभाव पड़ेगा । अनुमान है कि मिस्र पर किये गये इस आक्रमण के परिणाम बहुत गम्भीर और सम्भवतः दीर्घकालीन होने को हैं ।

यह कहा गया है कि इन कार्यवाहियों के फलस्वरूप रूस को मध्य पूर्व में आने से रोक दिया गया है । मैं मानता हूं कि मेरी समझ में यह नहीं आया है कि इससे रूसियों को आने से कैसे रोक दिया गया है । इससे सम्भवतः भविष्य में रूसियों के लिये दरवाजा खुल गया है, बिल्कुल उसी प्रकार जैसे कि बगदाद समझौते के परिणाम स्वरूप जो कि किसी देश विशेष से मध्य पूर्व की रक्षा करने के लिये किया गया था और जैसा कि कहा जाता है कि यह एक प्रतिरक्षात्मक समझौता था, रूस मध्य पूर्व में पहले से भी अधिक रुचि लेने लग गया है । अतः यह युक्ति ठीक नहीं प्रतीत होती कि मिस्र पर आक्रमण करने से रूसी वहां आने से रुक गये । वस्तुतः, मेरे विचार में, इससे तो मध्य पूर्व को किसी अपेक्षाकृत बड़ी लड़ाई का संभावित अखाड़ा बना दिया गया है । इस प्रकार अन्ततोगत्वा, यही प्रतीत होता है कि इससे मिस्र और इंग्लैण्ड तथा फ्रांस की चाहे कितनी भी क्षति क्यों न हुई हो या होती रहे किन्तु तो भी मिस्र की अपेक्षा इंग्लैण्ड और फ्रांस को ही अधिक हानि होगी ।

अब दूसरी तरफ-हंगरी और सोवियत रूस को लीजिये । वहां मिस्र के समान तुरन्त कोई सैनिक आक्रमण नहीं हुआ था । सोवियत सेनाओं का यह हस्तक्षेप तो उन देशों में वारसा समझौते के आधार पर निरन्तर चला ही आ रहा था । मुझे वारसा समझौते की वैधानिक बातों से अधिक वास्ता नहीं है । सम्भव है कि कुछ वकील यह कहें कि वारसा समझौते की शर्तों के अनुसार सोवियत सेना वहां रहनी ही चाहिये । परन्तु यह एक तो बड़ी मामूली-सी बात है । सच तो यह है कि, और जैसा की बाद की घटनाओं से स्पष्ट हो गया है, कि वहां सोवियत सेनायें हंगरी की जनता की इच्छा के विरुद्ध थीं । यह बात बिल्कुल साफ है ।

†**श्री कामत** (होशंगाबाद) : यह तो अच्छा रुख बदला है ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : और कोई स्पष्टीकरण पर्याप्त नहीं है ।

यह सच है कि सोवियत संघ की शक्तिशाली सेना ने बुडापेस्ट से लेकर हंगरी भर में सैनिक तरीके से विजय प्राप्त कर ली है । लेकिन किस मूल्य पर ? और मैं यह नहीं जानता कि अन्तिम परिणाम क्या होगा । मुझे इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि देर-सेवेर से हंगरी की जनता, जिसने स्वतन्त्रता तथा एक पृथक् एकात्म्य को प्राप्त करने के लिये अपनी अभिलाषा को और किसी अन्य देश द्वारा छा न जाने के विचार को बिल्कुल स्पष्ट रूप से प्रदर्शित कर दिया है, अन्ततः विजयी होगी । इस सम्बन्ध में मेरे मन

---

†मूल अंग्रेजी में ।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

में कोई संदेह नहीं है । निःसन्देह मैं यह नहीं कह सकता कि इस बीच संसार की इस स्थिति के कारण जो कि बहुत ही जटिल हो गई है, कठिनाइयां क्या होंगी ।

परन्तु इसके अतिरिक्त भी हमें यह अवश्य अनुभव करना चाहिये कि इन सभी घटनाओं ने न केवल उन बहुत से देशों में, जिनके सम्बन्ध में यह समझा जाता है कि वे निष्पक्ष राष्ट्र हैं, बल्कि उन देशों और सरकारों में भी जो उस देश में विश्वास रखते हैं, यूरोपीय देशों में, तथा यदि मैं कह सकूं तो स्वयं सोवियत संघ की जनता में ऐसे मामलों में रूस संघ की प्रतिष्ठा को बड़ा धक्का पहुंचाया है ।

किसी भी देश, उसकी सरकार और उसकी नीति का जो सम्मान होता है, वह आर्थिक या अन्य किसी वस्तु से, जिसे आप खो बैठें, कहीं अधिक मूल्यवान होता है । हम आजकल शक्तिशाली प्रवृत्तियों को देख रहे हैं । मेरे विचार में प्रत्येक देश में हम उन्हें देखते हैं चाहे वह रूस संघ हो या इंगलैंड या यूरोप के देश हों या अमेरिका, और निश्चित रूप से एशियाई और अफ्रीकी देशों में भी, यह समझने की कोशिश करने की कि क्या हुआ है तथा यह मालूम करने का प्रयत्न करने की कि इतनी संभ्रम की परिस्थिति में उन्हें क्या करना चाहिये, यह प्रवृत्ति है । यहां तक कि वे लोग जो किसी एक विशिष्ट नीति से घनिष्ठ रूप से बंधे हुए थे या, यदि मैं इस शब्द का उपयोग करूं, कि जो देशों के एक विशिष्ट 'गुट' से सम्बंधित थे, वे भी यह बात निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि क्या वह नीति ठीक ही थी । मैंने कुछ समय पहिले कहा था कि रूस संघ में पिछले दो या तीन वर्ष से कुछ नई प्रवृत्तियां देखने में आई थीं और रूस संघ के जीवन तथा गतिविधियों पर और बाद में पूर्व यूरोपीय देशों पर उनका प्रभाव हुआ था । परन्तु हमने देखा है कि पूर्व यूरोपीय देशों में जो प्रगति हुई थी, वह बहुत ही धीमी थी और वे जैसा कि सोचते हैं यह चाहते थे कि प्रगति तेजी से हो और उसने रूस संघ के लिये एक कठिनाई उत्पन्न की थी, जिसके परिणामस्वरूप यह संघर्ष हुआ । मैं यह नहीं कह सकता कि क्या इस संघर्ष के फलस्वरूप रूस संघ अधिक उदारीकरण की नीति अपनायेगा या नहीं । यदि यह जटिल अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति न होती तो मैं स्पष्ट रूप से कुछ कह सकता था । परन्तु निकट भविष्य के विचार की एक ओर रखते हुये, जैसा कि मैंने अभी कहा था, मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि इन सभी देशों में, शासकों में और जनसाधारण में, रूस संघ या पश्चिमी यूरोपीय देशों या कहीं और भी इन सभी देशों में ऐसी शक्तियां काम कर रही हैं जो कि जनता को कुछ दूसरे ही ढंग से सोचने को प्रेरित कर रही हैं । मुझे विश्वास है कि वे यह कहते हैं कि वे गलत मार्गों पर चलते रहे हैं । इन सभी संधियों और समझौतों के कारण वे कहां पहुंच गये हैं? शान्ति या सुरक्षा की ओर नहीं बल्कि झगड़ों की ओर । सोचिये तो बगदाद संधि की इस समय स्थिति क्या है? सभी जानते हैं कि बगदाद संधि अब बेजान-सी वस्तु हो चुकी है और उसमें बिल्कुल भी कोई जान नहीं रही है । 'सीएटो' संधि—सम्बन्ध क्या कर रहा है, मैं नहीं जानता हूं, परन्तु हमने एक लम्बे समय से उसके सम्बन्ध में कुछ नहीं सुना है । हो सकता है कि वह भी निष्क्रिय होने को हो । वार्सा संधि का प्रभाव और पूर्वी यूरोप के देशों में उसकी प्रतिक्रिया को हम देख रहे ह । हो सकता है उसका बाह्य रूप बना रहे, वह अपनी अन्तर्वस्तु खो चुकी है ।

जहां तक 'नाटो' संधि का सम्बन्ध है हमने संधि में शामिल विभिन्न देशों के बीच मतभेदों को देखा है । यदि वह पहिल एक प्रकार से आध्यात्मिक धर्मयुद्ध के लिये भी थी अब वह भी खत्म हो गई है । एक प्रकार से दोनों एक दूसरे के विरुद्ध आध्यात्मिक धर्मयुद्ध के लिये थीं । दोनों ही धर्मयुद्ध की उस भावना को खो चकी हैं । वे अब केवल कागजी सम्बन्ध ही बन कर रह गई हैं जिनके पीछे वे निश्चित रूप से वे सशस्त्र शक्तियां ह जिनमें दोनों ओर ही अपने सहज गुणों या उस भावना की कमी है जो सम्भवतः पहिले उन्हें कुछ महत्व प्रदाव करती थीं ।

इस प्रकार अब हम एक ऐसी स्थिति पर पहुंच गये हैं जब हिंसा ने हस्तक्षेप किया है और बड़े देशों द्वारा सशस्त्र सेनाओं के उपयोग ने प्रत्यक्ष रूप से कुछ सफलता प्राप्त की है परन्तु वास्तव में यह दिखा दिया

है कि वह स्थिति को सुलझाने में असमर्थ रहे हैं । यह कमज़ोरी है जो आज के संसार के सामने प्रकट हुई है ।

परन्तु यह सत्य बना रहता है कि लोगों के मन में हिंसा जागृत हो गई है और यह उबाल निश्चित रूप से कार्य करता रहेगा । मुझे हार्दिक आशा है कि इन सभी के परिणामस्वरूप हम इस संकट से निकल जायेंगे और फिर निश्शस्त्रीकरण और इन सभी सैनिक संधियों की समाप्ति की दिशा में, जो इतनी बेकार और वस्तुतः इतनी खतरनाक सिद्ध हुई हैं, अग्रेतर कार्यवाही करेंगे और नए तरीके से काम करने की बात सोचने का प्रयत्न करेंगे ।

हम जानते हैं कि हमें प्रायः यह बताया गया है कि प्रौद्योगिकी ने अत्यधिक प्रगति की है और प्रौद्योगिकी ने हमें अणुबम तथा उदजन बम दिये हैं जो कि वास्तव में प्रौद्योगिकीय प्रगति का ही परिणाम है । जब हम प्रविधि के उच्चतर स्तरों पर पहुंचते हैं तो ये उच्चतर स्तर के कारण अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के उच्चतर स्तर की मांग अर्थात् आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है, वे वस्तुतः सामाजिक संगठन के उच्चतर स्तर की मांग करत हैं ; वे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के उच्चतर सहयोग की मांग करते हैं । आप उच्च प्रौद्योगिकी के साथ एक पुराना समाज और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की एक पुरानी पद्धति नहीं रख सकते ।

कठिनाई यह है कि जबकि प्रौद्योगिकी उदजन बम तक जा पहुंची है, हमारे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध अभी तक बहुत ही पिछड़े हुये प्रकार के हैं, और उस स्तर तक नहीं पहुंच सके हैं । जब तक वे वहां तक नहीं पहुंच पाते हैं, ये सभी झगड़े होते रहेंगे । जहां तक इस प्रश्न का हम से सम्बन्ध है, साम्यवाद या अन्य प्रकार के बाद, हमारे विचार वे हैं जिनका महान योग्य तथा ईमानदार व्यक्तियों ने धर्मयुद्ध करने वालों के ढंग पर पालन किया है । इसमें संदेह नहीं कि साम्यवाद ने ३८ या ३९ वर्ष पहिले बड़ी संख्या में नव-युवकों को प्रभावित किया था और वह न्यूनाधिक लोगों को प्रभावित करता रहा है । सभी प्रकार के संगठन बनाये गये—कोमिनफार्म, कोमिनटर्न आदि आदि—यद्यपि साम्यवाद धीरे-धीरे लोगों की नजरों में इस अर्थ में कुछ अधिक सम्मानपूर्वक बन गया कि साम्यवादी सरकारें अन्य सरकारों की भांति कृत्यक थीं तथापि उसमें एक प्रकार का धर्म का पहले भी था जिसे प्रायः हस्तक्षेप द्वारा फैलाया गया । यह सशस्त्र हस्तक्षेप था या अन्य किसी प्रकार का हस्तक्षेप था, यह परिस्थितियों पर निर्भर था । धीरे-धीरे वह कम होता गया है परन्तु अभी वह विद्यमान अवश्य है ।

आप मुझ से सहमत हों या न हों, आन्तरिक आर्थिक व्यवस्था के अन्तर्राष्ट्रीय परिणामों का आधार-इससे तात्पर्य आन्तरिक आर्थिक व्यवस्था से नहीं—ऐसा है कि इससे अन्य देशों में हस्तक्षेप के सम्बन्ध में शंकायें उत्पन्न हो जाती हैं । और हमने वास्तव में उदाहरण देखे हैं, परन्तु मैं सब से हाल का उदाहरण लेता हूं । यह एक सत्य है कि हंगरी की सरकार स्वतंत्र सरकार नहीं थी, एक थोपी हुई सरकार थी जिससे हंगरी की जनता सन्तुष्ट नहीं थी, पिछले युद्ध के बाद से अब तक, दस वर्ष, और दस वर्ष से भी अधिक समय बीत जाने पर भी यदि हंगरी में दस वर्षों में लोग इस विशिष्ट विचारधारा को नहीं अपना सके तो इससे कुछ असफलता का पता चलता है जो कि मेरे विचार में सैनिक विद्रोह की असफलता से कहीं बढ़ चढ़ कर असफलता है। इससे यह संकेत मिलता है कि हम सभी को, चाहे हम साम्यवादी हैं या ग़ैर साम्यवादी, नये सिरे से सोचना है। हम हिंसा की बात करते हैं, मिस्र का प्रश्न सामने आया है और हंगरी का प्रश्न सामने आया है । इस समय इसने अन्य प्रश्नों को परे हटा दिया है। चाहे यह अफ़्रीका हो या एशिया के भाग हों, इसके अतिरिक्त सारतः कोई अन्तर नहीं है कि वह बुराई का आदी हो जाता है । जबकि हम पुरानी बुराई के आदी होते हैं एक नई बुराई अचानक एक प्रतिक्रिया रूप से उत्पन्न करती है । इसलिये हमें इस मामले पर इस दृष्टिकोण से विचार करना होगा कि क्या वह बुराई पुरानी है या नहीं, यदि बराई हिंसा पर आधारित है, यदि वह सशस्त्र सेनाओं द्वारा एक देश और जनता के दमन पर

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

आधारित है तो यह बुरी बात है और इसे दूर करना होगा। क्योंकि जब तक ऐसा न किया जायेगा तब तक वह झगड़ा तथा संघर्ष उत्पन्न करेगी और सम्भवतः युद्ध की ओर ले जायेगी।

इसलिये वर्तमान संकट के बाह्य स्वरूप के अतिरिक्त जनता के मन में अन्तःकरण का एक संकट जो एक आध्यात्मिक संकट है विद्यमान है। मुझे आशा है कि इस आध्यात्मिक संकट का अर्थात् इस अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के एक उत्तम मार्ग को ढूंढने के इस प्रयत्न का, केवल मात्र शक्तिशाली प्रतिक्रियायें गला नहीं घोंट सकेंगी। यह सिद्ध हो चुका है कि वह मार्ग यदि जनता के दमन के लिये, चाहे वह कहीं भी हो और कैसी भी क्यों न रहती हो, सशस्त्र सेनाओं के उपयोग पर आधारित है तो वह आधारित नहीं किया जा सकता है या किसी भी प्रकार से उसका कोई स्थायित्व नहीं हो सकता है। यदि उस सत्य को स्वीकार किया जाता है तो हमें पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहियें। चाहे वह साम्यवादी समाज है या ग़ैर साम्यवादी समाज। यदि एक बार हिंसा, हिंसा के ढंग तथा दमन के ढंगों को निकाल दिया जाय तब ये सभी विचारधारायें स्वतन्त्रता से कार्य कर सकेंगी। उन पर परीक्षण किये जा सकते हैं और हम दूसरों के अनुभव से सीखेंगे, ऐसी चीजें अपनायेंगे जो हमें पसन्द होंगी और जो हमें पसन्द नहीं होंगी उन्हें नहीं अपनायेंगे और इस प्रकार प्रगति करेंगे।

भाषण समाप्त करने से पूर्व मेरे सामने एक बात और भी है। मेरे सामने वह बाद प्रतिवाद है जो हंगरी सम्बन्धी संकल्प पर संयुक्त राष्ट्र में भारत के मतदान के सम्बन्ध में हुआ। हमने लोक-सभा सचिवालय के द्वारा माननीय सदस्यों को हंगरी से सम्बन्धित वे दो भाषण परिचालित किये थे जो हमारे प्रतिनिधि श्री कृष्ण मेनन ने ८ तथा ९ नवम्बर को दिये थे। हमें वे परसों प्राप्त हुये थे।

†**आचार्य कृपालानी** (भागलपुर व पूर्निया) : हमें वे अभी यहां प्राप्त हुये हैं।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मुझे इसका खेद है। हमें वे परसों प्राप्त हुये थे और कल मैंने कहा था कि इसकी प्रतिलिपियां तैयार करनी होंगी। मैं कोई उद्धरण दूं उससे इन भाषणों को पढ़ने से मेरे द्वारा किसी उद्धरण के देने की अपेक्षा कहीं अच्छी जानकारी प्राप्त होगी।

उन दिनों जो मतदान हुआ था मुझे आज उसका अग्रेतर ब्योरा प्राप्त हुआ है। मैं खुशी से उसे परिचालित कर देता परन्तु मुझे आज सवेरे ही वह तार मिला है। उस संकल्प की नौ कंडिकायें हैं। मेरे विचार में आप में से कुछ सदस्यों के पास वह है। पहली पांच कंडिकाये में संकल्प की 'प्रस्तावना' रूप से है और अगली चार कंडिकायें प्रवर्ती कहलाती हैं। संकल्प की प्रत्येक कंडिका पर पृथक् रूप से मतदान हुआ था। मैं कह नहीं सकता कि क्या माननीय सदस्य वास्तविक आंकड़े चाहते हैं या यह जानना चाहते हैं कि भारत ने क्या किया था?

प्रस्तावना १ : भारत ने मतदान में भाग नहीं लिया। कुल सोलह देशों ने मत नहीं दिया था और भारत ने भी नहीं दिया था। प्रस्तावना २ : भारत ने मतदान में भाग नहीं लिया।

†**श्री कामत** (होशंगाबाद) : मैं प्रधान मंत्री से प्रार्थना करता हूं कि वह हमें प्रत्येक मामले में यह बतायें कि अरब-एशियाई गुट की प्रतिक्रिया क्या थी और उसने किस प्रकार मत दिया था।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मैं पढ़ देता हूं। थोड़ी सी फेरबदल के साथ न्यूनाधिक देश एक से हैं।

प्रस्तावना के प्रथम भाग के सम्बन्ध में जिन देशों ने मत नहीं दिया वे थे अफगानिस्तान, आस्ट्रिया, बर्मा, कम्बोडिया, लंका, मिस्र, फिनलैंड, भारत, इंडोनेशिया, जार्डन, लैबनान, लिबिया, सऊदी अरब,

†मूल अंग्रेजी में।

सीरिया, येमन, यूगोस्लाविया। थोड़ीसी फेर बदल के साथ प्रस्तावना में मत न देने वालों का यही क्रम था।

प्रस्तावना ३: प्रस्तावना २ के अनुसार ; भारत ने मत नहीं दिया।

प्रस्तावना ४: भारत ने उस दल के साथ मत नहीं दिया।

प्रस्तावना ५: भारत ने बड़े दल के साथ मत नहीं दिया।

अब हम प्रवर्ती भाग की ओर आते हैं जिसकी चार कंडिकायें हैं

प्रवर्ती कंडिका १: भारत ने मतदान में भाग नहीं लिया।

†**आचार्य कृपालानी** : क्या प्रधान मंत्री प्रवर्ती भाग को पढ़ने की कृपा करेंगे कि :

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : समस्त संकल्प।

†**अध्यक्ष महोदय** : संकल्प की प्रतिलिपियां परिचालित की जा चुकी हैं। माननीय सदस्य कृपया संकल्प को देखें।

†**डा० लंका सुन्दरम्** (विशाखापटनम्) : केवल श्री कृष्ण मेनन के दो भाषण परिचालित किये गये थे।

†**श्री कामत** : प्रधान मंत्री ने मेरे विचार में शुक्रवार को कहा था कि भारत सरकार ने हंगरी से रूसी सेनाओं को हटाये जाने का समर्थन किया है। क्या मैं जान सकता हूं कि क्या संकल्प के प्रवर्ती भाग की कंडिका १ के सम्बन्ध सें मतदान में भाग न लेना सरकार की नीति के सुसंगत है ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : हंगरी के सम्वन्ध में चार संकल्प थे, भारत ने एक के पक्ष में मत दिया था और कुछ में मत नहीं दिया था। हमें इस संदर्भ में इसे पढ़ना चाहिये। जब भारत ने मतदाम में भाम नहीं लिया था तो वह सेनाओं को हटाये जाने के पक्ष में था परन्तु इस समय सैं संदर्भ के सम्बन्ध में और इसे कसे प्रस्तुत किया गया था, तथ्य बता रहा हूं।

प्रवर्ती भाग यह है —

> "बिना किसी अग्रेतर विलम्ब के सोवियट समाजवादी गणराज्यों के संघ की सरकार से हंगरी से अपनी सेनाओं को हटाने की मांग करता है।"

यह एक बात है।

दूसरा यह है —

> "विचार करती है कि शान्ति तथा व्यवस्था स्थापित होते ही, हंगरी की जनता को इस योग्य बनाने के लिये कि वे यह निश्चित कर सकें कि अपने देश में किस प्रकार की सरकार स्थापित करना चाहते हैं, संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान सें हंगरी में स्वतन्त्र चुनाव होने चाहियें;

'संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में' शब्दों पर पृथक् मतदान हुआ था। भारत ने इसके विरुद्ध मत दिया। पहिले बताये गये देशों के अलावा श्रीलंका और यूगोस्लाविया ने भी इसके विरुद्ध मतदान दिया। सारे संकल्प में भारत ने केवल 'संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में' शब्दों के विरुद्ध मतदान दिया। यह वास्तविक स्थिति है। कंडिका २ के शेष भाग के बारे में भारत ने मतदान में भाग नहीं लिया। तथा कण्डिका ३ और ४ के सम्बन्ध में भी उसने मतदान में भाग नहीं लिया।

---

†मूल अंग्रेजी में।

†**आचार्य कृपालानी** : इस समस्त संकल्प के विरुद्ध अन्य किन देशों ने मतदान दिया ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : रूस के साथी कई देशों के अलावा, यूगोस्लाविया, भारत, पोलैंड, रूमानिया, रूस इत्यादि लगभग ग्यारह देशों ने इसके विरुद्ध मतदान दिया।

मैं अपना प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूं।

†**श्री अशोक मेहता** (भंडारा) : हम इस जानकारी के लिये प्रधान मंत्री के कृतज्ञ हैं। हम यह बात भी जानना चाहेंगे कि भारत ने कुछ खंडों पर मतदान में भाग क्यों नहीं लिया ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मैं यह बता चुका हूं। इसलिये कि हम उस सारे प्रसंग को पसन्द नहीं करते थे।

†**श्री अशोक मेहता** : हमें कंडिका वार सूचना चाहिये।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : उस दिन दो-तीन संकल्प रखे गये थे। हमें उनका उद्देश्य और सारा प्रसंग पसन्द नहीं आया। मोटे रूप से, निदेश यह है, उदाहरणार्थ यदि कोई संकल्प हो तो आपको उसका प्रसंग देखना चाहिये। उस समय आपको अपने निर्णय का विश्वास करना होगा। हमें बातों पर विचार करने के लिये पर्याप्त समय नहीं मिलता है।

†**श्री कामत** : क्या भारत के संशोधनों की प्रतिलिपियां······

†**अध्यक्ष महोदय** : माननीय सदस्य आलोचना बाद में कर सकते हैं। उन्हें भाषण देने के लिये पर्याप्त समय मिलेगा।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : मैं सुझाव दूंगा कि माननीय सदस्य श्री कृष्ण मेनन का भाषण पढ़ें। ये भाषण उन प्रश्नों से सम्बन्धित है अतः उनकी प्रतिलिपियां परिचालित कर दी गई हैं।

†**श्री कामत** : मेरा सुझाव है कि भारत के संकल्प की प्रतिलिपियां अभी या कल तक परिचालित कर दी जायें। भारत ने कुछ संशोधन पेश किये थे। वे संसद् पुस्तकालय अथवा मंत्रालय, कहीं भी उपलब्ध नहीं हैं।

†**श्री जवाहरलाल नहरू** : मैं विविध रूप से नहीं जानता कि हमने इस संकल्प पर कोई संशोधन प्रस्तुत किया था या नहीं। अन्य संकल्पों पर कुछ संशोधन रखे गये थे। मैं नहीं जानता कि वे इस संकल्प विशेष से सम्बन्धित हैं। मेरे पास इस विषय पर आगे और कोई जानकारी नहीं है।

†**अध्यक्ष महोदय** : प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ। विभिन्न दलों के नेताओं को भाषण करने के लिये ३० मिनट, अन्य सदस्यों को पन्द्रह मिनट मिलेंगे।

†**श्री अ० क० गोपालन** (कन्नूर) : मैं अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के सम्बन्ध में प्रधान मंत्री के वक्तव्य तथा संयुक्त राष्ट्र में भारत के दृष्टिकोण का स्वागत करता हूं।

मिस्र पर आंग्ल-फ्रांसीसी हमले के फलस्वरूप हमारे देश में उस देश के पक्ष में अभूतपूर्व मतैक्य हो गया है जिससे यह ज्ञात होता है कि कई मतभेदों के होते हुये भी शान्ति, स्वतन्त्रता तथा मानवता की प्रतिष्ठा के लिये हम सदैव एक हैं। यद्यपि इस मसले में हम सभी लोग एक हैं, तथापि हंगरी के सम्बन्ध में परस्पर मतभेद है। मैं प्रारम्भ में ही यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि हम लोगों को हंगरी निवासियों के साथ हार्दिक सहानुभूति है। यद्यपि मिस्र में युद्ध-विराम होने से सभी ने कुछ आराम का सांस लिया है तथापि हम प्रधान मंत्री की इस बात से सहमत हैं कि यदि आगे ऐसी प्रवृत्ति न रोकी गई तो पुनः युद्ध की स्थिति पैदा हो सकती है वस्तुतः अब भी स्थिति विस्फोटक है, तथापि पूर्व के सभी स्वतन्त्र देश शान्ति

†मूल अंग्रेजी में।